

1938D Satprarupana by Pushpdant or Pujiyapad

Bhagvan Pushpdant and Pujiyapad Swami (In Jain Siddhant Bhaskar, 1938), and its manuscript.

Written April 1936/Published March 1938.

Jain Siddhant Bhaskar, March 1938, p. 216-224.

भगवान् पुष्पदन्त और पूज्यपाद स्वामी

[लेखक—श्रीयुक्त पं० होरालाल शास्त्री]

सूक्तमान में उपलब्ध होनेवाले श्रुतज्ञान के सर्वप्रथम लिपिवद्धरूपों या उद्धारक भगवान् पुष्पदन्त और भगवान् भूतयति हुए हैं। इनका समय भगवान् महाश्वर के निर्वाण के लगभग ६०० वर्ष बाद का है। भ० पुष्पदन्त ने सर्वप्रथम जिन रचना को लिपिवद्ध किया, वह सूत्रात्मक 'जीवट्टाण' है। इसके ऊपर आचार्य बीरसेन ने 'ध्वज' नाम की टीका सप्त हजार श्लोकों प्रमाण बनायी। आज इस सिद्धान्तशास्त्र को 'ध्वज' इस नाम से प्रसिद्धि है। लोकप्रसिद्धता में इस लेख में 'जीवट्टाण-सिद्धान्त' को 'ध्वज-सिद्धान्त' नाम से उल्लेख करूंगा।

भ० उमाश्वानि के तत्त्वार्थसूत्र पर सर्वप्रथम टीकाकार पूज्यपाद स्वामी माने जाते हैं, हालांकि इसके पूर्व में स्वामी ममम्भद्र तत्त्वार्थ सूत्र पर 'गन्धहस्तिमहाभाष्य' के रचयिता प्रसिद्ध हैं। किन्तु आज के उपलब्ध जैन वाङ्मय में उसके अवतरण या उल्लेख न पाये जाने से ऐतिहासिकों को उसके अस्तित्व में सन्देह है। कुछ भी हो इस वक्त उस के वापस मुझे कुछ नहीं कहना है, उसका निर्वाण तो भविष्य में उपलब्ध होनेवाला जैन साहित्य ही करेगा। किन्तु यह तो निश्चिन ही है कि तत्त्वार्थसूत्र पर जितनी भी दि० या श्ये० टीकाएँ उपलब्ध हैं, उन सब में 'सर्वार्थसिद्धि' ही सबसे प्राचीन मौखिक एवं प्रामाणिक मानी जाती है। पूज्यपाद का समय विक्रम की पांचवीं-छठी शताब्दी माना जाता है और इस प्रकार से भगवान् पुष्पदन्त के लगभग पांच सौ वर्ष बाद उनका समय ठहरता है।

सर्वार्थसिद्धि की—प्रथम अध्याय के आठवें सूत्र (ससंख्या०) की टीका अपना खास महत्त्व रखती है। उसमें पायी जानेवाली विरोधता न राजवार्तिक में व्यक्तोपर होती है और न श्लोक वार्तिक या तत्त्वार्थसूत्र की अन्य दि० श्ये० टीकाओं में ही। इस सूत्र की टीका का गम्भीर एवं गवेषणात्मक अध्ययन करने से पता चलता है कि पूज्यपाद स्वामी के समय तक भगवान् पुष्पदन्त के 'जीवट्टाण' सिद्धान्त का पठन-पाठन बहुलता के साथ प्रचलित था, क्योंकि इस (ससंख्या०) सूत्र की समग्र टीका में ध्वज-सिद्धान्त के मूलसूत्रों का स्पष्ट प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है।

में यहाँ पर केवल संप्रत्ययों के कुछ उद्धरण देकर उक्त बात को पुष्ट करूँगा—

अथ ल गिहान्त—		सर्वार्थनिधि
सत्प्ररूपणा		प्र० अ० सू० ८
१—अथिमिच्छाद्वि	सूत्र ७	मिथ्यादृष्टिः
२—सासगुसम्माद्वि	” ८	सासदनसंयद्दृष्टिः
३—सम्मामिच्छाद्वि	” ९	सम्यग्मिथ्यादृष्टिः
४—असंजदसम्माद्वि	” १०	असंयतसम्यग्दृष्टिः
५—संजदासंजदा	” ११	संयतासंयतः
६—पमत्तसंजदा	” १२	प्रमत्तसंयतः
७—अप्रमत्तसंजदा	” १३	अप्रमत्तसंयतः
८—अपुत्र्यकरणपविट्टमुद्धिसंजदेसु अथि उवसमा खवा	” १४	अपूर्वकरणस्थाने उपशमकः क्षपकः
९—अगिण्यद्विवादरसांपरागपविट्टमुद्धिसंजदेसु अथि उवसमा खवा	” १५	अनिवृत्तिवादरसाम्परायस्थाने उपशमकः क्षपकः
१०—सुद्धमसांपराइयपविट्टमुद्धिसंजदेसु अथि उवसमा खवा	” १६	सूक्ष्मसाम्परायस्थाने उपशमकः क्षपकः
११—उवसंतकसायवीयरायइद्धुमत्था	” १७	उपशान्तकपायवीतरागइद्धुमत्था
१२—खीणकसोयवीयरायइद्धुमत्था	” १८	क्षीणकपायवीतरागइद्धुमत्था
१३—सजोगकेवली	” १९	सयोगकेवली
१४—अजोगकेवली	” २०	अयोगकेवली चेति
१५—संतपस्वणाए दुविहो गिहो सो-ओधेण आदेसेण य	” ६	सत्प्ररूपणा विधा सामान्येन विशेषेण च
१६—आदेसेण गदिवाणुवादेण अथि शिरयगदी निरिक्कगदी मणुस्स-गदी देवगदी सिद्धगदी चेदि	” २२	विशेषेण गत्यनुवादेन नरकगतौ सवासु-पृथ्वीपु आशानि चत्वारि गुणस्था-नानि सन्ति
गोरइया चउट्टाणोसु अथि मिच्छाद्वि सासगुसम्माद्वि सम्मामिच्छाद्वि असंजदसम्माद्वि ति	” २३	

१७—तिरिक्त्वा पंचसु द्वाणोसु अस्थि मिच्छाइद्री सासणसम्माइद्री सम्मा- मिच्छाइद्री असंजदसम्माइद्री संज- दासंजद ति सूत्र २४	तिर्यग्गतौ तान्येव संयतासंयतस्थानाधिकारि सन्ति
१८—मणुस्सा चोदसगुणाद्वाणोसु अस्थि मिच्छा०..... जाव अजागकेवलि ति ,, २५	मनुष्यगतौ चतुर्दशापि सन्ति
१९—देवा चदुसु द्वाणोसु अस्थि मिच्छा० सास० सम्मामि० असं० ,, २६	देवगतौ नारकवन्
२०—एइंदिया बीइंदिया तीइंदिया चउरिं० एकम्मि चेव मिच्छाइद्रीद्वाणो ,, ३४	इन्द्रियानुवादेन—एकेन्द्रियादिषु चतुरिन्द्रिय पर्यन्तेषु एकमेव मिथ्यादृष्टिस्थान
२१—पंचिदिया० अजोगकेवलि ति ,, ३५	पंचेन्द्रियेषु चतुर्दशापि सन्ति
२२—कायाणुवादेण०..... ,, ४० पुढविकाइया आउका० तेउका० वाउका० वणपफइका० एकम्मि चेय मिच्छाइद्रीद्वाणो ,, ४१	कायानुवादेन पृथिवीकायिकादिषु वनस्पति कायान्तेषु एकमेव मिथ्यादृष्टिस्थानम्
२३—तसकाइया बीइंदियण्णहुदि जाव अजोगिकेवलि ति ,, ४३	त्रसकायेषु चतुर्दशापि सन्ति
२४—जोगणुवादेण०..... ,, ४५ मणजोगो वचिजोगो कायजोगो सण्णिमिच्छाइद्रीपहुडि जाव सजोग- केवलि ति ,, ६२	योगानुवादेन त्रिषु योगेषु त्रयोदश राश स्थानानि भवन्ति
२५ - वेदाणवादेण०..... ,, ९८ इत्थिवेदा पुरिसवेदा असण्णिमिच्छा- इद्रीपहुडि जाव अणियद्वि ति ,, ९९ णवुंसयवेदा एइंदियण्णहुडि जाव जाव अणियद्वि ति ,, १००	वेदानुवादेन त्रिषु वेदेषु मिथ्यादृष्ट्या निवृत्तिवादान्तानि सन्ति ।
२६—तेण परमवगदवेदा चेदि ,, १०१	अपगत वेदेषु अनिवृत्ति वादराशयो केवल्यन्तानि ।

<p>२७—कसायानुवादेण० क्रोधकसाई माणकसाई माया कसाई एइ'दियणपहुडि जाव अणि- यट्टि ति " १०९</p>	<p>कणवानुवादेन क्रोधमानमायासु मिथ्या- दृष्ट्यादीनि अनिश्रुतिवादरस्थाना- न्तानि सन्ति</p>
<p>२८—लोभकसाई एइ'दियणपहुडि जाव सुहमसांपराइय सुद्धि संजद ति " ११०</p>	<p>लोभकपाये नान्येव सूक्ष्म साम्परायस्थाना- धिकानि</p>
<p>२९—अकसाई चउट्टाणोसु अस्थि उव- संतकुराणवीरगायद्धुमत्था खीणकसाय वीम० सजोगकेवली अजोगकेवलि ति " १११</p>	<p>अकपायः उपशान्तकपायः क्षीणकपायः सयोगकेवली अयोगकेवली चेति</p>
<p>३०—गाणाणुवादेण अस्थि० मदिअण्णाणी सुदअण्णाणी एइ'दियणपहुडि जाव सासण सम्माइडिठ ति " ११२</p>	<p>ज्ञानानुवादेन सम्यग्ज्ञानधुनाज्ञानविभंगज्ञानेषु मिथ्यादृष्टिः सारावनसम्यग्दृष्टिश्चास्ति</p>
<p>विभंगणाणं सण्णमिच्छाइड्डीणं वा सासणसम्माइड्डीणं वा " ११४</p>	
<p>३१—सम्मामिच्छाइड्डीणाणे निण्ण वि- खाणाणि अण्णाणोण मिस्साणि आभिणिवोहियणाणं मादिअण्णा- णोणं मिस्सियं सुदणाणं सुदअ- ण्णाणोणं मिस्सियं ओहियणाणं विभंगणाणोणं मिस्सियं निण्ण वि- खाणाणि अण्णाणोणं मिस्साणि वा " ११६</p>	
<p>३२—आभिणिवोहियणाणं सुदणाणं ओहियणाणं असंजदसम्माइड्डीण- हुडि जाव खीणकसाय वादराग- छदुमत्थ ति " ११७</p>	<p>आभिनिवोभकश्रुतावाधिज्ञानेषु असंयत- सम्यग्दृष्ट्यादीनि क्षीणकपायान्तानि सन्ति</p>
<p>३३—मणपज्जवणाणां पमत्तसंज- दपहुडि जाव खीणकसायवोद- राग-छदुमत्थ ति " ११८</p>	<p>मनःपर्ययज्ञाने प्रमत्तसंयतादयः क्षीणकपा- यान्ताः सन्ति</p>

३४—केवलशास्त्री तिसु ठाणोसु सजोग- केवली अजोगकेवली सिद्धा चेदि ॥ ११५	केवलज्ञाने सयोगोऽयोगश्च
३५—संजमाणुवादेशे ॥ १२० संजदा पमत्तसंजदपहुडि जात्र अजोगकेवलि ति ॥ १२१	संयमानुवादेन संयताः प्रमत्तादयोऽपि केवल्यन्ताः ।
३६—सामाह्यच्छंदोपस्थापनाशुद्धिसंज- दापमत्तसंजदपहुडि जात्र अगिण्यद्वि ति ॥ १२२	सामायिकच्छंदोपस्थापनाशुद्धिसंयताः प्रम- त्तादयोऽनिवृत्तिस्थानान्ताः ।
३७—परिहारसुद्धिसंजदा दोसु ठाणोसु पमत्तसंजददृष्टो अपमत्त- संजददृष्टो ॥ १२३	परिहारविशुद्धिसंयता प्रमत्ताप्रमत्ताश्च
३८—सुहृत्संपरायसुद्धिसंजदा एक- स्मि चैय सुहृत्संपराह्यसुद्धि संजददृष्टो ॥ १२४	सूक्ष्मसाम्परायशुद्धिसंयता एकस्मिन्नेव सूक्ष्मसाम्परायस्थानि
३९—तद्वैकल्याद्विहारसुद्धिसंजदा च- दुसु ठाणोसु अवसंतकसायवीर- रायद्वदुमत्था स्त्रीणकसायवीर- सजोगकेवली अजोग केवलि ति ॥ १२५	यथाख्यातविहारसुद्धिसंयताः—उपशांतक- पायादयोऽयोगकेवल्यन्ताः
४०—संजदासंजदा एकस्मि चैय संजदा-संजददृष्टो ॥ १२६	संयतासंयता एकस्मिन्नेव संयतासंयतस्थानि
४१—असंजदा एहंदियपहुडि जात्र असंजदसम्माइद्वि ति ॥ १२७	असंयता जात्रोपु चतुर्षु सुगमस्थानेषु
४२—दंसयाणुवादेशे ॥ १२८ चक्रदंसणी चउरिदियपहुडि जात्र स्त्रीणकसायवीररायद्वदुमत्था ति ॥ १२९ अचक्रदंसणी एहंदियपहुडि जात्र स्त्रीणकसायवीररायद्वदु- मत्थ ति ॥ १३०	दर्शितानुवादेन अक्षुब्धनायक्षुब्धशयो- मिथ्यादृष्ट्यादीनि कौशुकपापान्तानि सन्ति
४३—ओहिदंसणी असंजदसम्माइद्वि- पहुडि जात्र स्त्रीणकसायवीरराय द्वदुमत्थ ति ॥ १३१	अवधिदर्शने असंयतसम्यग्दृष्ट्यादीनि क्षीण- कपापान्तानि

४४—केवलदसणी तिसु द्वाणोसु सजोग- केवली अजोगकेवली सिद्धा चेदि ,, १३२	केवलदर्शने सयोगकेवली अयोगकेवली च
४५—लेस्सावादेण० ,, १३३	लेश्यानुवादेन कृष्णनीलरूपोतलेश्यासु मि- थ्याहृष्ट्यादीनि असंयतसम्यग्दृष्ट्य- न्तानि सन्ति
किण्हल्लेस्सिया खीललेस्सिया काउ- लेस्सिया एइ दियप्पहुडि जाव असंजदसम्माइट्टि ति ,, १३४	
४६—संजलेस्सिया पम्मलेस्सिया सण्णिमिच्छाईट्टिप्पहुडि जाव अपमत्तसंजद ति ,, १३५	तेजःपद्मालेश्ययोर्मिथ्याहृष्ट्यादीनि अप्रमत्त- स्थानान्तानि ।
४७—सुकलेस्सिया सण्णिमिच्छाईट्टि- प्पहुडि जाव सजोगकेवलि ति ,, १३६	शुक्ललेश्यायोर्मिथ्याहृष्ट्यादीनि सयोग- केवल्यन्तानि
४८—तेण परमलेस्सिया ,, १३७	अलेश्या अयोग-केवलिनः ।
४९—भविश्याणुवादेण० ,, १३८	भक्कालुवादेन मध्येषु चतुर्दशापि सन्ति
भवसिद्धिया एइ दियप्पहुडि जाव अजोगकेवलि ति ,, १३९	
५०—अभवसिद्धिया एकम्मि चेय मि- च्छाईट्टिट्ठाणे ,, १४०	अमक्या आश एव स्थाने
५१—सम्मत्ताणुवादेण० ,, १४१	सम्यक्त्वानुवादेन ज्ञायिकसम्यक्त्वे असंयतसम्यग्दृष्ट्यादीनि अयोगकेवल्य- न्तानि सन्ति
सम्माइट्टीखइयसम्माइट्टीअसं- जदसम्माइट्टिप्पहुडि जाव अजोग- केवलि ति ,, १४२	
५२—वेदगसम्माइट्टी असंजदसम्मा इट्टिप्पहुडि जाव अपमत्त- संजद ति ,, १४३	ज्ञायोपशमिकसम्यक्त्वे असंयत- सम्यग्दृष्ट्यादीनि अप्रमत्तान्तानि
५३—उवसममम्माइट्टीअसंजदसम्मा- इट्टिप्पहुडि जाव उवसंतकसाय- वीदरागद्धुमत्थ ति ,, १४४	औपशमिकसम्यक्त्वे असंयतसम्य- ग्दृष्ट्यादीनि उपशांतकपायान्तानि
५४—सम्मामिच्छाईट्टी एकम्मि चेव सम्मामिच्छाईट्टिट्ठाणे ,, १४५	

सासणसम्माइट्टो एकम्मि चेष-		सासादनसम्यग्दृष्टिः सम्यङ्मिथ्यादृष्टि
सासणसम्माइट्टिट्ठाणे	॥ १४६	मिथ्यादृष्टिश्च तेषु स्थाने
मिच्छाइट्टो एइंदियप्पहुडि जाव		
सण्णिमिच्छाइट्टि ति	॥ १४७	
५५—सण्णियाणुवादेण०	॥ १७०	संज्ञानुवादेन संज्ञिपु द्वादशाणुस्था-नि
सण्णोमिच्छाइट्टिप्पहुडि जाव		चाणकपायन्तानि
खीणकसायत्रीयरामछदुमत्थ ति	॥ १७१	
५६—असण्णोणइंदियप्पहुडि जाव		असंज्ञिपु एकमेव मिथ्यादृष्टिस्थानम्
असण्णोपंचिदिय ति	॥ १७२	
५७—आहाराणुवादेण०	॥ १७३	आहारानुवादेन आहारकेषु मिथ्यादृष्ट्या
आहारा एइंदियप्पहुडि जाव		दीनि सयोगकेवल्यन्तानि
सयोगकेवलि ति	॥ १७४	
५८—अणाहारा चदुरु ट्ठाणोसु		अनाहारकेषु विप्रहृत्यापन्नेषु त्रीणि गुण
विग्गहणइसमावण्णयां केवलीयां		स्थानानि-मिथ्यादृष्टिः सासादनसम्य
वा समुवादागदायां अजोग-		असंयतसम्यग्दृष्टिश्च । समुदात्तगत
केवली सिद्धा वेदि	॥ १७५	सयोगकेवली अयोगकेवली च

उपर्युक्त उद्धरणों को देखते हुए यह कहने को मन चाहता है कि मानों भगवान् पुण्यवन्त के सिद्धान्त-सूत्रों का पूज्यपाद स्वामी ने संस्कृतानुवाद कर दिया हो। किन्तु ऐसा मान लेने पर भी पूज्यपाद स्वामी के असमान पाण्डित्य में कोई बट्टा नहीं आता, क्योंकि पूज्यपाद स्वामी के समय में संस्कृत भाषा का ही सर्वत्र प्राचल्य था। उसमें ही सर्व मतप्रदानकर्तृ के विद्वान् अपने अपने धार्मिक, दार्शनिक, साहित्यिक ग्रन्थों की रचना कर रहे थे और उस समय ब्राह्मणों का संस्कृत-भाषा-पाण्डित्य सर्वत्र गिचर रहा था, इसलिए जैनाचार्यों को भी यह उचित प्रतीत हुआ कि जैन वाङ्मय सम्बन्धी साहित्य की रचना भी संस्कृत भाषा में ही की जाय जिससे हमारा साहित्य जैन-साहित्य के मुकाबिले में किसी प्रकार हीन न समझा जाय। इसके पूर्व तक सारा जैन साहित्य प्राकृत भाषामय था पर पाण्डित्याभिमानी-ब्राह्मणों ने अपने नाटकदि ग्रंथों में संस्कृत के मुकाबिले में प्राकृत भाषा का नीचा स्थान दिया अर्थात् नीच पात्रों की भाषा प्राकृत रखी और सर्वसाधारण की दृष्टि में प्राकृत दृष्टी भाषा समझी जाने लगी तब जैनाचार्यों को भी संस्कृत भाषा अप्तानी पड़ी।

पाठकगण यहाँ यह शंका उपस्थित कर सकते हैं, कि यह कैसे मान लिया जाय कि पूज्यपाद के सामान् सिद्धांत-सूत्र रहे हैं और उन्होंने उनका संस्कृतानुवाद सर्वार्थसिद्धि में

दिया है। परन्तु इसका उत्तर हमें इसी के नं० ३१ से मिल जाता है जिसमें मिश्रगुणस्थान के मिश्रज्ञानों का वर्णन सिद्धांतसूत्र में तो किया गया है पर सर्वार्थसिद्धि में उक्त बात बिलकुल ही नहीं दी गई है। कोई यह कह सकते हैं कि संभव है, पाठ छूट गया हो पर यथार्थ में पाठ नहीं छूटा है। किंतु जान बूझ कर यह विषय छोड़ा गया सा प्रतीत होता है। कारण कि पूज्यपाद स्वामी के हृदय में यह तर्क उठा कि सम्यक्तता या मिथ्यापना हो 'दर्शन' के साथ सम्बन्ध रखने वाली वस्तुयें हैं, यहां ज्ञान में उनका क्या सम्बन्ध? फिर भी उनके हृदय में यह प्रश्न खड़ा ही रहा कि मिश्रगुणस्थानवर्ती ज्ञानों को 'ज्ञान' कहा जाय या 'अज्ञान'? यदि ज्ञान मानें—तो उनकी गिनती साम्यज्ञानरूप मणि श्रुत ज्ञान की गुणस्थान-संख्या के साथ होना चाहिए और यदि 'अज्ञान' मानें तो उनकी गिनती कुमति कुश्रुत ज्ञान के गुणस्थानों के साथ की जानी चाहिए? पर ये तो उने एकदम ही छोड़ गए हैं जो कि एक विचारणीय बात है। परन्तु ध्वजसिद्धांत के गूल सूत्रकार तो उसे बहुत ही स्पष्ट सूत्र-द्वारा (सूत्र नं० ११६) उस बात को प्रकट करते हैं कि इस मिश्रगुणस्थान में जब मिश्रभाव है, तब सम्यक्त्व है, तो फिर उनके ही अज्ञान-मिश्रज्ञान भी क्यों न मान लिया जाय। इसीलिये उन्होंने उक्त अनुसार ही सूत्र में निबद्ध किया है।

श्रुतसागर सूरि ने भी श्रुतसागरी टीका में इसी स्थान पर निम्न प्रकार से शंका उठाकर इसका समाधान करना चाहा है, पर ये भी इसका उचित समाधान नहीं कर सके हैं। क्योंकि जो समाधान किया है उसकी पुष्टि किसी सिद्धांतग्रन्थ से नहीं होती, बल्कि विरोध ही आता है। वह अंश इस प्रकार है:—

“सम्यग्मिथ्यादृष्टेर्ज्ञानमज्ञानं च केचलं न संभवति, तस्याज्ञानत्रयाधारत्वात्। उक्तं च—
'मिस्तेषामाण्यस्यं मिस्सं अमृणाणस्तपयेति।' तेन ज्ञानानुवादे मिश्रस्यानभिधानं, तस्याज्ञान-
प्ररूपणायामेवाभिधानं ज्ञातव्यम्। ज्ञानस्य (?) यथावस्थितार्थविषयत्वाभावात्।”

यह बात तो बिलकुल स्पष्ट ही है कि श्रुतसागरी टीका बिलकुल ही सर्वार्थसिद्धि का शब्दशः अनुकरण करती हुई लिखी गई है, जिसका अर्थ यह होता है कि श्रुतसागरसूरि के हृदय में भी यह शंका उठी कि पूज्यपाद स्वामी ने इस मिश्रगुणस्थान में ज्ञान या अज्ञान का निरूपण क्यों नहीं किया? उसका समाधान उन्होंने उक्त रूप में करना चाहा है, पर यह एक आश्चर्य की ही बात है कि स्वयं ही सिद्धांतसूत्र का उद्धरण देते हुए उन्होंने मिश्रगुणस्थान में मिश्रज्ञान कहने का साहस नहीं किया। क्योंकि उनके ध्यान में संभवतः यह बात सामने रही-मालूम पड़ती है कि यदि हम इस गुणस्थान में मिश्रज्ञान मानेंगे तो लोग इसे पूज्यपाद

की त्रुटि समझेंगे या फिर हमारे ही कथन को अप्रमाण समझेंगे। इसलिए उन्होंने उस बात की ओर संकेत भी किया, सिद्धांतमूत्र का उद्धरण भी दिया और एक हलका सा समाधान भी कर दिया। जो कुछ भी हो पर इतना तो इस बात से पता चलता ही है कि श्रीपूज्यपाद स्वामी के सामने सर्वार्थसिद्धि रचते समय ध्वलसिद्धांत के मूलसूत्र अवश्य थे। इस बात का और भी प्रबल समर्थन आगे की संख्या, क्षेत्र आदि प्ररूपणों के देखने से बखूबी हो जाता है जिसका यह अर्थ होता है कि आज से डेढ़ हजार वर्ष पूर्व इस सिद्धांतग्रंथ का पठन-पाठन बहुत जोरों से होता रहा है और होना ही चाहिये था—क्योंकि यही अमूल्यनिधि तो हमारे महर्षियों ने बिरासत में सौंपी है।



नमो २ नमो २ प्रथम

५. सिद्धांत मान्यता का प्रमाण

श्री

पृ० ६१-६३६

भगवान् पुष्पदन्त जैन पूज्यपाद स्वामी

— 0 —

वर्तमान में उपलब्ध होने वाले भूत ज्ञान के सर्व प्रथम -
लिपि-बद्ध कला या उद्धारक भगवान् पुष्पदन्त जैन मंत्रिकलि-
नक्षत्रक हुए हैं। इनका समय भगवान् महावीर के निर्वाण के लगभग
६०० वर्ष बाद का है। भगवान् पुष्पदन्त ने सर्व प्रथम जिस रचना को
लिपि-बद्ध किया, वह सूत्रात्मक 'जीवमूला' है। इसीके उपर आचार्य
गीरसेन ने ६० हजार श्लोक प्रमाण 'धवला' नाम की टीका
बनायी, जो कि आज 'धवला सिद्धान्त' नाम से प्रसिद्ध है।
लोक प्रसिद्धि का मैं इस लेख में 'जीवमूला सिद्धान्त' को 'धवला
सिद्धान्त' नाम से ही उल्लेख करूंगा।

म० उमास्वामी के तत्त्वार्थसूत्र पर सर्व प्रथम टीका
कार पूज्यपाद स्वामी माने जाते हैं। हालांकि - इसके पूर्व में
स्वामी समतलभद्र, तत्त्वार्थसूत्र पर 'गन्धा हरित महाभाष्य' के
रचयिता प्रसिद्ध हैं। किन्तु आज के उपलब्ध जैन वाङ्मय में
उसके अवतरण या उल्लेख न पाये जाने से ऐतिहासिकों को
सन्देह है। (बुझनी हो, इस समय उसके वाक्य कुछे कुछ ही
कहना है। इसका निष्पत्ति में उपलब्ध होने वाला
जैन साहित्य ही करेगा। किन्तु यह तो निश्चित ही है कि तत्त्वार्थ-
सूत्र पर जितनी भी दि० या श्वे० टीकायें उपलब्ध हैं, उन-
सबमें 'सर्वाद्य सिद्धि' ही सर्व प्राचीन, मौलिक एवं प्रामा-
णिक मानी जाती है। पूज्यपाद का समय विक्रम की पांचवी-छठी
शताब्दि माना जाता है और इस प्रकार से भगवान् पुष्पदन्त
के लगभग पांचसौ वर्ष बाद उनका समय ठहरता है।

सर्वाद्य सिद्धि की - प्रथम अध्याय के आठवें सूत्र
(सर्वसंख्याक्षेत्रं) की टीका अपना खास महत्व रखती है। उसमें
पायी जाने वाली विशेषता न राजवातिकों में दक्षिणोत्तर होती
है और न प्रलोकवातिकों या तत्त्वार्थसूत्र की अन्य दि०
श्वे० टीकाओं में ही। इस सूत्र की टीका का गम्भीर एवं
गवेषणात्मक अध्ययन करते से पता चलता है कि पूज्यपाद

स्नामीके समय तक जगनात् पुष्पदन्तके 'जीवद्वारा' सिद्धान्त का पहल-पाठन ब्रह्मण्यता के साथ सर्वत्र प्रचलित था, क्योंकि (रस-सम्बन्धनादि) शब्दही समग्र टीकाके ध्वज सिद्धान्त के ध्वज-सूत्रों का स्पष्ट प्रातिबिम्ब दृष्टि गीतर होता है। जैसा कि परतुष-नात्मक दृष्टि से केवल सखरूपणा के दुष्ट उद्धार के लिए उक्त काल-को पुष्ट करेगा।

ध्वज सिद्धान्त संवत्सूत्र संज्ञा	सर्वार्थ सिद्धि उपर्य उद्योग संज्ञा
१ आत्ति मिच्छाद्वी	७ मिच्छाद्वि:
२ सासण सम्भोद्वी	८ सासादन सम्भोद्वि:
३ सम्भामिच्छाद्वी	९ सम्भोद्विम्भोद्वि:
४ असंजद सम्भोद्वी	१० असंजत सम्भोद्वि:
५ संजदा संजदा	११ संजता संजतः।
६ प्रमत्तसंजदा	१२ प्रमत्तसंजतः।
७ अप्रमत्तसंजदा	१३ अप्रमत्तसंजतः।
८ अपुष्पकरण षोडशसुद्धि संजदेसु	अपुष्पकरण सुस्थाने उपशमकः
आत्ति उवसमा खवा	१४ सपकः।
९ आतिशक्तिवादे सांप्रापबिदुसुद्धि-आतिशक्तिवादे साम्प्रथम स्थाने	संजदेसु आत्ति उवसमा खवा १५ उपशमकः सपकः।
१० सुभ्रु सांपरायण षोडशसुद्धिसंजदेसु	सुभ्रु साम्प्रथमस्थाने उपशमकः
आत्ति उवसमा खवा	१६ सपकः।
११ उवसंत दसायवीमराय सुदुमत्ता	१७ उपशान्त प्रथम वीतराग सुदुमत्तः।
१२ शीणकसायवीमराय सुदुमत्ता	१८ शीणकसाय वीतराग सुदुमत्तः।
१३ सजोग केवली	१९ समोग केवली
१४ अजोग केवली	२० अमोग केवली चेति ।

ध्वज सिद्धान्त में २१ वें नम्बर का शब्द 'सिद्धा-चेदि' है। जिसका कि 'जीवद्वारा (जीवस्थान) में लिहाज रहे होगा आवश्यक है। किन्तु ध्वज पाठ स्नामीने पुष्पदन्त की दृष्टि से उसकी कोई उपावृत्त नहीं समझी और अयोग केवली के नामके आगे ही 'अति' शब्द देकर के उक्त कालपी समाप्त कर दी है।

14	संतपश्चणाए दुविहो णिदेशो ओघेण आदेशे णय	6	सत्त्वरूपणा द्विविधा ओघेन साधनेन विशेषेण च ।
15	आदेशेण गदियाणुवादेशेण णेउत्तमा-चउत्तमोसु अत्थि-मिच्छा	22	विशेषेण गत्यनुवादेन नरक- गतौ सर्वसुखेषु आद्यानि
	इती तासणत्तमाइती तम्माभिच्छाइती असंजदत्तमाइती	23	चाचारि गुणस्थानान्तरं सन्ति
16	तिरिच्छा पंचसु द्वाणेषु अत्थि- मिच्छाइती तासणत्तमाइती तम्माभिच्छा- इती असंजदत्तमा० संजदासंजदात्ति 24		तिर्यग्गतौ तान्येव संयतासंयत- स्थानादिस्थानि सन्ति
17	मनुस्सा-मोदसु गुणद्वाणेषु अत्थि- मिच्छा० अजोगकेवलित्ति 25		मनुष्यगतौ-चतुर्दशापि सन्ति
18	देवा-चदुसु द्वाणेषु अत्थि मिच्छा० सासणा० तम्मानि० असंत्तमा० 26		देवगतौ नारकवत्
20	इंदिया वीइंदिया तीइंदिया-चउरिदि० एकमिन्धेयमिच्छाइतिद्वाणे	38	इन्द्रियानुवादेन-एकेन्द्रियादिषु-चतुरि- न्द्रियपर्यन्तेषु एकमेव मिथ्याद्यष्टस्थानम्
21	पंचिंदिया० अजोगकेवलित्ति 27	35	पंचेन्द्रियेषु-चतुर्दशापि सन्ति
22	कायाणुवादेशेण पुढविकाइया आउका० तेउका० वाउ- का० वणप्पका० एकमिन्धेय मिच्छा- इति द्वाणे	40	कायानुवादेन शिथिलीकायि कादिषु एकमेव वनस्पति क्रमान्तेषु एकेव मिथ्याद्यष्टस्थानम् ।
23	तस काइया वीइंदियप्पुडि जाव अजोगकेवलित्ति 42 जोगकेवलित्ति 43		असक्रायेषु-चतुर्दशापि सन्ति
24	अणजोगो वच्चिजोगो कायजोगो सण्ण- मिच्छाइतिप्पुडि जाव सजोगकेवलित्ति 42		योगानुवादेन त्रिषु योगेषु-मोदसु गुणस्थानानि भवन्ति ।
25	वेदाणुवादेशेण इत्थि वेदापुरित्तवेदा अरुण्णिमि- च्छा इतिप्पुडि जाव अणियाइत्ति 44		वेदानुवादेन त्रिषु वेदेषु मिथ्याद्यष्टस्थानानि सन्ति - वादरास्तिानि सन्ति ।
	पुंसय वेद इइंदियप्पुडि जाव अणियाइत्ति 40		
26	तेण पञ्चमवेदा-वेदि	40	अपगतवेदेषु अनिश्चितकदा द्ययोगकेवल्यन्तानि ।

- २७ क्साभाणुनादेण १०८ क्सायानुवादेन क्रोध भाव जामाकु-
क्रोधकसाई भाणकसाई जामाकसाई मिथ्या दृष्ट्यादीनि अनिश्चिती वादर-
एइंदिमपुहुडि जाव आणियादिति १०९ स्थानान्तरानि सान्ति ।
- २८ लोमकसाई एइंदिमपुहुडि जाव- लोमकसाये तान्धेय मरुक्रमकाम्य-
सुहुमतां पररुमसुहि संजदाति ११० राम स्थानाधिकानि ।
- २९ अकसाई-उउवाणेसु, आत्मि उवसंत क्साय- अकसायः- उवशात्त क्सायः, क्षीण-
मीमराय छदुमत्था, स्मीण क्सायवीदराग- क्सायः सयोगक्षेवली अयोगक्षेवली
छदुमत्था, सयोगक्षेवली अयोगक्षेवलीति १११ चोति ।
- ३० शाणाणुवादेण उगत्ति ११२ शान्तुवादेत मत्थ ज्ञान धुताज्ञान-
मादि अण्णाणी सुदअण्णाणी एइंदिम- विमंगज्ञानेषु मिथ्यादृष्टिः लोकादत-
पुहुडि जाव लामग लम्माइडिति ११३ लम्मादृष्टिश्च वासि ।
विमंगणाणं सविणमिच्छाइडिणं वा
लामग लम्माइडिणं वा ११४
- ३१ सम्मानिच्छाइडिणो तिण्णि वि
शाणाणी अण्णाणेण मिच्छाणे-आभि-
णिवोहिमणाणं मादि अण्णाणेण मिच्छिणं,
सुदणाणं सुदअण्णाणेण मिच्छिणं, ओहि
णाणं विमंगणाणेण मिच्छिणं, तिण्णिवि
शाणाणी अण्णाणेण मिच्छाणे वा ११५
- ३२ आभिणिवोहिमणाणं सुदणाणं ओहि
णाणं असंजद लम्माइडिपुहुडि जाव- असंजत लम्मादृष्ट्यादीनि क्षीण-
स्मीण क्साय वीदराग छदुमत्थाति ११७ क्सायान्तरानि सान्ति ।
- ३३ मण पज्जवणाणी पमत्तसंजदपुहु- मनः पदमं ज्ञाने प्रमत्तसंयतादक-
डि जाव स्मीण क्साय वीदराग छदुम- क्षीण क्सायात्ताः सान्ति ।
त्थाति ११८
- ३४ देवमणाणी तिसुठावेसु-सजोग- देवमज्ञाने सयोगा उभोगाश्च
क्षेवली अजोगक्षेवली सिद्धवेदि ११९

३५ संजमायुकोदेश ० १२० संमता युकोदेन संयताः प्र-
संजदा पमत्संजदप्पुडि जाव अजोग - तादयोऽ योग केवल्यताः ।
केवलीति १२१

३६ लामा इम वेदो बडा वण सुदि संजदा लामा मि कवेदो पस्थापना सुदि संयताः
पमत्संजदप्पुडि जाव आणयति १ प्रमतादयोऽ निवृत्ति स्थानाताः ।

३७ परिहार सुदि संजदा दोरु ठाणे सु - परिहार विशुद्धि संयताः प्रमता -
पमत्संजदपुठो अपमत्संजद ठाणे १२३ प्रमताथम् ।

३८ सुदि लामा य सुदि संजदा एकुमिनेय सुदि संयता एकुमिनेय
सुदि संजदपुठो १२४ लेव सुदि लामप्रापस्था ने ।

३९ जहा कसाय निहार सुदि संजदा च दु सु - मधीयता त निहार सुदि संयताः
ठाणे सु उव संत कसाय वीयराय सुदि संयता उपगत कसायादयोऽ योग केव -
रणी कसाय वीयराय सुदि संयता लजोग - ल्यताः ।
केवली अजोग केवलीति १२५

४० संजदा संजदा एकुमिनेय संजदा संज - संयता संयता एकुमिनेय संयता -
द ठाणे १२६ संयत स्थाने ।

४१ आसंजदा एइं दि पप्पुडि जाव असे - असंयता आद्ये सु - चतुर्गुणस्थाने -
जद लमत्संजदिति १२७ तु ।

४२ संजमायुकोदेश ० १२८ दर्शन युकोदेन च सुदर्शनान् च सु -
च सुदर्शनो न उचिदि पप्पुडि जाव दर्शनयो किं पदा दृष्ट्या दीने -
लीण कसाय वीयराय सुदि संयता १२९ क्षीण कसायात्ता नि संति ।
अच सुदर्शनो एइं दि पप्पुडि
जाव रणी कसाय वीयराय सुदि संयता १३०

४३ ओइं संजदा असंजद लामा सुदि पप्पुडि अवाधि दर्शन असंयत लमत्संजदा
जाव रणी कसाय वीयराय सुदि संयता १३१ सीने क्षीण कसायात्ता नि ।

४४ केवली अजोग केवली ति सु ठाणे सु लजोग केवली अजोग केवली ति सु ठाणे सु लजोग
केवली अजोग केवली ति सु ठाणे सु लजोग केवली अजोग केवली ति सु ठाणे सु लजोग

४५ लेखाणुवादेश ० १३३ अल्पानुवादेन कृष्णवर्णोऽप्येत-
 किंल्लोस्त्रिया जील्लोस्त्रिया काउले- लेखाणु मिथ्यादृष्ट्यादीनि असंयत-
 स्त्रिया एतद्विषयपुत्राडि जाव असंयत- सम्प्रदृष्ट्यात्तानि सन्ति ।
 लम्माइडिहो १२४

४६ तेउ लेस्त्रिया पम्न लेस्त्रिया लण्णि- तेज, पम्न लेपपमो मिथ्यादृष्ट्यादीनि
 मिथ्याइडिपुत्राडि जाव अपमत्तसंयतानि अपमत्तस्थानान्तावनि ।
 १३५

४७ कुडु लेस्त्रिया लण्णि मिथ्याइडिपुत्राडि कुडु लेपपमां मिथ्यादृष्ट्यादीनि
 जाव लजोग केवा लोत्ति १३६ लमोग केवल्मत्तानि ।

४८ तेण पम्न लेस्त्रिया १३७ अलेपमा अपोग केवा लोत्त ।

४९ भावेमाणुवादेश ० १३८ अल्पानुवादेन भवेषु चतुर्दशार्षि
 भवतिह्रिया एतद्विषयपुत्राडि जाव सन्ति ।
 अजोग केवा लोत्ति १३९

५० अमवाडिह्रिया एकुम्मिन्वेम- अमवा क्वाथ एवस्थाने ।
 मिथ्याइडिह्रियो १४०

५१ लम्माणुवादेश ० १४१ सम्प्रदृष्ट्यानुवादेन क्षायेक लम्मात्ते-
 लम्माइडिह्रिय एतद्विषयपुत्राडि असंयत- असंयत लम्मादृष्ट्यादीनि अपोग-
 लम्माइडिपुत्राडि जाव अजोग केवा लोत्ति केवल्मत्तानि सन्ति ।
 १४२

५२ वेदा लम्माइडि असंयत लम्माइडि- क्षायेक पणमिक लम्मात्ते असंयत-
 पुत्राडि जाव अपमत्तसंयतानि १४३ लम्मादृष्ट्यादीनि अपमत्तान्तावनि ।

५३ उदत्त लम्माइडि असंयत लम्माइडि- जो पणमिक लम्मात्ते असंयत-
 पुत्राडि जाव उदत्त वलाम वीदराग- सम्प्रदृष्ट्यादीनि उदत्तात्त केवाया-
 एवुमात्तानि १४४ सन्ति ।

५४ लम्मा मिथ्याइडिह्रियो एकुम्मिन्वेम - लम्मादत्त लम्मादृष्टिः लम्मा-
 लम्मा मिथ्याइडिह्रियो १४५ मिथ्याइडिह्रियो मिथ्यादृष्ट्या
 लण्णि लम्माइडिह्रियो एकुम्मिन्वेम लण्णि- स्त्रे स्त्रे लण्णि
 लम्माइडिह्रियो १४६
 मिथ्याइडिह्रियो एतद्विषयपुत्राडि जाव
 लण्णि मिथ्याइडिह्रियो १४७

२२	संज्ञानुकादेन- १७०	संज्ञानुकादेन संज्ञानुकादेन- स्वाभावानि क्षीणकामास्वानि ।
	संज्ञानुकादेन- १७१	असांज्ञानु एकोप सिद्धादादेषात्
२६	आहारानुकादेन- १७२	आहारानुकादेन- आहारेषु सिद्धा-
२७	आहारा इंदियमप्युति जाय- १७३	आहारा इंदियमप्युति जाय- अजोगादेवत्वानि ।
	अजोगादेवत्वानि- १७४	
५२	असाहारा नदुस्तुतोरु- १७५	असाहारेषु सिद्धात्पणोपुत्ती- उगास्वानानि सिद्धादादेषात्- लाभादा-
	लाभादा- १७६	लाभादादेषात्- अलं यत् सम्यग्दृष्टिश्च- समुद्भातात्- अजोगादेवत्वानि- अजोगादेवत्वानि- १ ।

उपर्युक्त उद्धरणों से देखते हुए यह कहने को मत-बाह्य है कि जनों का मत प्रथमदर के सिद्धांत खूनों का पूजनपद स्वीकार लेखकानुकादकी प्रतिकृति है । किंतु ऐसा मत लेने पर भी पूजनपद-स्वाप्ती के अक्षर-धारण का सिद्धांत कोई बिना नहीं आता, क्योंकि पूजनपद स्वाप्ती के समय में संस्कृत भाषा का ही सर्वत्र प्रचलन था । उस समय सभी महामतधरों के विचार अपने २ धार्मिक-दार्शनिक एवं साहित्यिक ग्रंथों की रचना करते थे- संस्कृत भाषा में ही की करते थे, क्योंकि उस समय साहित्यों का संस्कृत भाषा का सिद्धांत सर्वत्र विकसित रहा था और इसी लिए जन-जनों की सभी धर्म-प्रतीक-विद्या कि जन-जनों का साहित्य भी साहित्य भी संस्कृत भाषा में ही की जाय- जिससे जन-जनों का साहित्य जन-जनों के हृदय में ही उकर हीक न समझ जाय । इसके अतिरिक्त जन-जनों का साहित्य प्राकृत भाषा में था । परंपरागत धर्म-साहित्यों में अपने साहित्यिक ग्रंथों में संस्कृत के सिद्धांतों में प्राकृत भाषा को जीवित भाषा दिया अर्थात् जीवित भाषा की भाषा प्राकृत सभी धर्म-साहित्यों की दृष्टि में प्राकृत ही भाषा माना जाने लगी है । जन-जनों की संस्कृत भाषा अपनाता पड़ती ।

के वाक्य गण - यहां यह गुंजा उपासित की जानते हैं कि यह
 केंद्र भाग लिया जाय - कि इज्जत के लक्षण सिद्धांत रूप में
 रहे हैं और उन्होंने उनका निरूपण तर्कपूर्ण सिद्धि में किया है
 और इतका उत्तर उनके इतिहास लेख के नम्बर ३१ में मिल जाता है
 जिसमें कि शिक्षण पुस्तकानों के सिद्धांतों का वर्णन सिद्धांत रूप में
 हो किया गया है, वे तर्कपूर्ण सिद्धि में उक्त बात बिलकुल ही नहीं
 दी गई है। कोई बात यह कह सकते हैं कि लेखक ने, जो कुछ
 कहा है। वे प्रमाणात् में वाक्य नहीं सूटा है, कि ज्ञान पूर्वक यह
 यह विषय छोड़ा गया है। कारण कि - इज्जत
 का स्तर को रक्षित करने के लिए यह बरू उठा - कि लक्ष्य
 के लक्षण के सिद्धांतों को 'मार्ग' के साथ सम्बन्ध रखने
 वाली कहते हैं, यह ज्ञान में उनका का सम्बन्ध ? कि ज्ञान
 उनके लक्षण में यह उक्त रखा ही रहा कि शिक्षण पुस्तकानों
 को 'ज्ञान' कहा जाय, जो - अज्ञान ? यदि ज्ञान मात्र
 तो उनकी गिनती सम्मान ज्ञान रूप मरि श्रुत ज्ञान की उपासना लेखक
 के लक्ष्य होना चाहिए। और - यदि 'ज्ञान' मात्र, वे उनकी गिनती
 मरि श्रुत ज्ञान के उपासना को साथ की जाना चाहिए ?
 कुदरती हो वे उक्तों वे उक्त एक ही छोड़ा दिया है - जो कि
 एक निरालोच्य बात है ? मरि - धन के सिद्धांत के दूर
 करने का जो ~~वे~~ कुदरती रूप रक्त ज्ञान (समानता ११६)
 उक्त बात को उक्त कहें कि इत शिक्षण पुस्तकानों ज्ञान
 शिक्षा भाव है, शिक्षा सम्बन्ध है वे कि इत दोषों के ही
 अत्रुत्तर शिक्षा ज्ञान की ~~मार्ग~~ भाग लिया जाय ?, इतलिए उन्होंने
 उक्त तर्कपूर्ण ही ~~रुत~~ निष्कर्ष किया है।

~~जायीं उक्त उक्त करनी सुख श्रुत ज्ञान सी चीजें
 ही रही हैं, कियोंकि उक्त - इतिहास पर शिक्षण उक्तों का -
 उक्तों के उक्त साधन की बात है। ^{पर वे भी उक्त उक्त ज्ञान के लक्षण}
 नहीं कोल है, ^{उक्तों के लक्षण को सिद्धांत में वे उक्तों को उक्तों में}
~~उक्तों के लक्षण उक्तों में उक्तों में उक्तों में उक्तों में उक्तों में उक्तों में~~
~~उक्तों के लक्षण उक्तों में उक्तों में उक्तों में उक्तों में उक्तों में उक्तों में~~
 " सम्मान ज्ञान उक्त ज्ञान मात्र - केवल न लेने वाली~~

न स्था ज्ञान न मायारत्नार। उक्तं च - मिच्छे वागवत्तयं मिच्छं
 अथावा न एणे ति। वेत ज्ञानानुवादे शिक्षा स्था न मिच्छान्

तस्याश्चान्नं कुर्यात्पुनश्चापि पानं शीतलेपम् । शीतलेप (१) मद्यं -
स्थिताश्च विषमलोमान् । "

मद्यं वा क्लिष्टं त्वय्यद्यी हि कुतसाशीरीया क्लिष्टं
पी स्यात्पिष्टिद्वि का वाच्यः अनुकूलं क्ली तुष्टु लिश्रीगद्वि
जित्वा अष्ट दिहा एतन्नि शुक साग म्रि के एरु र्ममो
शंका उठी कि म्रुज्जवा सुवामी इतन्निशु शुभस्थानं शान्ति
म्रुज्जवा का निरूपण एतेतुही किमपि उक्तं तत्राथान उक्तेन
उक्तलेपं शीतं वाह्ये । मद्यं एक श्लेषश्च यदी काव र्म
स्वयं पी क्लिष्टं ज्वर का र्मवशाः उद्भूतः इति तुष्टु निशु
स्थानं 'निशु शान्ति' का कावृत्त नदी किमपि । मद्यं अके
द्यमानं संभक्षः मद्यं कावृत्त पी हि नालस्य पशुती हि कि-
मदि एत शत उक्तेनापि 'निशु शान्ति' कर्मेण, वा लोग र्म म्रुज्ज-
वादी सुटि तमदी - वा - कि एतरे पी कथं का, अमुकान्त-
तमदी । शतलिष्ट उक्तेन उक्तं वाच्ये ओर उक्तेनापि किमपि,
निशु शान्ति का उद्भूतं मदीया का एक हलका का साधान
मी का म्रिवा । जो तुष्टु मदी वा, मद्यं इतना वा इतकाव र्म
पण-म्रुज्जवा पी हि म्रुज्जवा सुवामी का तन्नि स्यात्पिष्टि
स्वयं तमद्य चिकित्सा सिद्धांत के म्रुज्जवा र्म अवश्य था । र्म
काव र्म उक्ते मी उक्त तमदीना म्रुज्जवा मदी कल्पे म्रुज्जवा-
श्मन्तम्रुज्जवा म्रुज्जवा के म्रुज्जवा म्रुज्जवा होलाग ही
जित्वा मद्यं अष्ट दिहा एतन्नि शुक साग म्रि के एरु र्ममो
म्रुज्जवा - इत लिष्टं गुण्य का पठन-वाचन कुल जोरों का
हेला वा एते का होला पी चाहि का कर्मेण
मदी म्रुज्जवा निशु शान्ति का एतरे मद्यं म्रुज्जवा
म्रुज्जवा म्रुज्जवा म्रुज्जवा म्रुज्जवा म्रुज्जवा

मूल लेख नं ६। २। ३७ की म्रुज्जवा - र्म म्रुज्जवा
६ उक्तं र्म म्रुज्जवा म्रुज्जवा मद्यं इतरी कापी हि जो कि
मद्यं म्रुज्जवा म्रुज्जवा म्रुज्जवा

उक्त काल म्रुज्जवा म्रुज्जवा म्रुज्जवा
६। २। ३७ ७

श्री

भगवान् पुष्पदन्त और पूज्यपाद स्वामी
=====0=====

वर्तमान में उपलब्ध होने वाले श्रुत ज्ञान के सर्व प्रथम लिखित लिपिबद्ध कर्ता या उद्धारक भगवान् पुष्पदन्त और भगवान्भूतिवर्ति भट्टारक हुए हैं। इनका समय भगवान् महावीर के निर्वाण के लगभग 600 वर्ष बाद का है। भगवान् पुष्पदन्त ने सर्वप्रथम जिस रचना को लिपिबद्ध किया वह सूत्रात्मक जीवट्ठाण है। इसी के उमर आचार्य वीरसेन ने 60 हजार श्लोक प्रमाण ध्वला नाम की टीका बनायी जो कि आज "ध्वल सिद्धान्त नाम से प्रसिद्ध है। लोक प्रसिद्धिगत में इस लेख में जीवट्ठाण सिद्धान्त को ध्वल सिद्धान्त नाम से ही उल्लेख करूंगा।

भगवान् उमास्वर्ति के तत्त्वार्थसूत्र पर सर्व प्रथम टीकाकार पूज्यपाद स्वामी माने जाते हैं। हालांकि—इसके पूर्व में स्वामी समन्तभद्र, तत्त्वार्थसूत्र पर गन्धर्वतन्त्रिमहाभाष्य के रचयिता प्रसिद्ध हैं। किन्तु आज के उपलब्ध जैन बाइबल में उसके अवतरण या उल्लेख न पाये जाने से ऐतिहासिकों को सन्देह है। कुछभी हो, इस समय उसके वास्तविक कुछ नहीं कहना है। इसका निर्णय तो भविष्य में उपलब्ध होने वाला जैन साहित्य ही करेगा। किन्तु यह तो निश्चित ही है कि तत्त्वार्थ सूत्र पर जितनी भी दिगम्बर या श्वेताम्बर टीकाये उपलब्ध हैं उन सब में सर्वार्थ सिद्धि ही सर्वप्राचीन, मौलिक एवं प्रामाणिक मानी जाती है। पूज्य पाद का समय विक्रम की पांचवी—छठवी शताब्दि माना जाता है और इस प्रकार से भगवान् पुष्पदन्त के लगभग पांचसौ वर्ष बाद उनका समय ठहरता है।

सर्वार्थ सिद्धि की—प्रथम अध्याय के आठवें सूत्र सत्संख्याक्षेत्रज्ञ की टीका अपना खास महत्व रखती है। उसमें पायी जाने वाली विशेषता न राजवार्तिक में दृष्टिगोचर होती है न श्लोकवार्तिक या तत्त्वार्थसूत्र की अन्य दिगम्बर श्वेताम्बर टीकाओं में ही। इस सूत्र की टीका का सम्भार एवं गवेषणात्मक अध्ययन करने से पता चलता है कि पूज्यपाद स्वामी के समय तक भगवान् पुष्पदन्त के जीवट्ठाण सिद्धान्त का पठन पाठन बहुलता के साथ सर्वत्र प्रचलित था, क्योंकि इस सत्संख्यादि० सूत्रकी समग्र टीका में ध्वलसिद्धान्त के मूलसूत्रों का स्पष्ट प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है। मैं यहीं पर तुलनात्मक दृष्टि से केवल सत्प्ररूपणा के कुछ उद्धरण देकर उक्त बात को पुष्ट करूंगा।

धवल सिद्धान्तसत्प्ररूपणासूत्रनं०	सर्वार्थसिद्धि प्रथमअध्यायसूत्र ४वें की टीका
1- अर्त्थ मिच्छाइटठी 7	मिध्यादृष्टिः
2- सात्तणसम्माइटठी 8	सात्तादनसम्यग्दृष्टिः
3-सम्मा मिच्छाइटठी 9	सम्यग्मिध्यादृष्टिः
4-असंजदसम्माइटठी 10	असंयतसम्यग्दृष्टिः
5सं संजदा संजदा 11	संयता संयतः
6- पमत्तसंजदा 12	प्रमत्तसंयतः
7- अप्पमत्तसंजदा 13	अप्पमत्तसंयतः
8- अपुच्चकरणं विदुत्तु द्विसंजदेसुअर्त्थ उवत्तमा ख्वा 14	अपूर्वकरण स्थाने उपशमकः क्षमकः
9-अणियटिठवादर सांपरास्प विठठ सुद्विसंजदेसुअर्त्थउवत्तमाख्वा 15	अनिवृत्ति वादर साम्परायस्थाने उपशमकः क्षमकः
10- सुहमसांपराइयप विठठसुद्विसंजदेसु अर्त्थ उवत्तमा ख्वा 16	सूक्ष्म साम्परायस्थाने उपशमकः क्षमकः
11-उवत्तकसायवीयराय छदुमत्था 17	उपशान्तकसाय वीतरागछदुमत्थः
12-उगीणकसायवीयराय छदुमत्था 18	क्षीणकसाय वीतराग छदुमत्थः
13- संजोग केवली 19	संयोगकेवली
14- अजोग केवली 20	अयोगकेवली चेति ।

धवल सिद्धान्तमें 21 वें नम्बर का सूत्र सिद्धदाचेदि" है जिसका कि जीवटठाण जीवस्थान के लिहाज से होना आवश्यक है । किन्तु पूज्यपादस्वामी ने गुणस्थानकी दृष्टि से उसकी कोई आवश्यकता नहीं समझी और अयोगकेवली के नाम के आगे ही "इति" शब्द देकर के उतबात की समाप्ति करदी है ।

- 15- संतपरूवणाए दुविहो णिददेसो ओयेण आदेसेण य 6
- 16- आदेसेणगदियाणुं वादेणो 22
- णेरइया च उददाणेसुअर्त्थ-मिच्छा इटठीसात्तणसम्माइटठीसम्मा मिच्छाइटठी उंसंजद सम्माइटठिति 23

सत्प्ररूपणाविधि सामान्येन विशेषेण च विशेषेणगत्यनुवादेन नरकगतौसर्वसुखीषु आद्यानिवत्वारि गुणस्थानानानितान्त

17-तिरिक्त्वापंचसुटठाणेतुअत्थि मिच्छाइठठीतासपतम्माइठठी सम्मामिच्छाइठठी असंजदसम्मा0 संजदासंजदात्ति 24	तिर्यग्गतौताम्येवसंयतासंयत-स्थानाधिकानिसन्ति
18-मणुत्ताचौदसगुणटठाणेतुअत्थि मिच्छा0 अजोगकेवलित्ति 25	मनुष्गतौचतुर्दशा यिसन्ति
19- देवाचदुसुटठाणेतुअत्थिमिच्छा0 तासण0सम्मामि0असं0सम्मामि0 26	देवगतौ नारकवत्
20-रहंदिवावीहंदिवातीहंदिवा वखरिंदिह रक्कमिमेयमिच्छाइ टिठठाणे 34	इनिद्रयानुवादेन-रकेनिद्रयादिषुचतुरिन्दयपर्यन्तेषु एकमेवमिध्यादृष्टिस्थानम
21 मंदिंदिवा0 अजोगकेवलित्ति 35	पर्येनिद्रयेषु चतुर्दशा यिसन्ति
22- कायानुवादेण 0 40 पुट्टिकाइया आउका0तेउका0 वाउका0वण्णाइका0रक्कमिमेयमित् छाइठठाणे 41	कायानुवादेनपृथिवीकायिकादिषु वनस्पति कायन्तेषुएकमेवमिध्यादृष्टिस्थानम ।
23- तसकाइयावीहंदिवापुहुदिजाव अजोगकेवलित्ति 42 जोयाणवादेण0 45	त्रसकायेषु चतुर्दशा यिसन्ति
24- मणजोगोवचिजोगोकायजोगो सण्णिमिच्छाइठठप्पुहुदिजावसंजोग केवलित्ति 62	योगानुवादेनत्रिषुयोगेसुत्रयोदशगुणस्थानानिभवन्ति
25- वेदानुवादेण0 98 इत्थिवेदापुरसवेदारुण्णमिच्छाइ इठठप्पुहुदिजावअणियाटिठत्ति99 णत्तयवेद रहंदिवापुहुदिजाव अणियाटिठत्ति 100	वेदानुवादेनत्रिषुवेदेषुमिध्यादृष्टयादयानिवृत्ति वादरान्तानि सन्ति ।
26-तेणपरमवगदवेदाचेदि 101	अपगतवेदेषु अनिवृत्तिवादरादययोगकेवल्यन्तानि ।